

महात्मा हंसराज

जीवनी और विचार

महात्मा हंसराज

जीवनी और विचार

डी० ए० वी० पब्लिकेशन्ज फाउण्डेशन
चित्र गुप्त रोड, नई दिल्ली

महात्मा हंसराज दिवस, 16 अप्रैल, 1989

मुद्रण:—
अरुण एण्ड राजीव प्राइवेट लिमिटेड,
10, डी० एस० आई० डी० सी०, स्कीम II,
ओखला इंण्डस्ट्रियल एरिया फेज़ II,
नई दिल्ली - 110020. दूरभाष: 635718.

संक्षिप्त जीवनी

महात्मा हंसराज

महात्मा हंसराज का जन्म एक सम्मानित मध्यवर्गीय परिवार में हुआ था। अपने बड़े भाई श्री मुल्खराज की आर्थिक सहायता से उन्होंने अपनी स्कूल तथा कॉलेज की शिक्षा पूरी की। कलकत्ता विश्वविद्यालय से उन्होंने बहुत अच्छे अंको से स्नातक की उपाधि प्राप्त की। उस समय के स्नातकों के लिये उच्च वेतन और उज्जवल भविष्य वाले ऊंचे सरकारी पद पर नियुक्त होना कठिन नहीं था। लेकिन युवक हंसराज ने आराम और विलासिता के स्थान पर गरीबी स्वीकार कर प्राचीन भारतीय ऋषियों की भांति अपना जीवन समाज की सेवा में अर्पित करने का निश्चय किया। आर्यसमाज के महान् संस्थापक महर्षि दयानन्द का स्वर्गवास नवम्बर 1883 में हो गया था। उनके उपदेशों का पंजाब पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा था। उनका स्वर्गवास हुये कुछ ही दिन हुये थे कि पंजाब के आर्य समाजियों ने उनकी पुण्य स्मृति में एक शिक्षण संस्था की स्थापना करने का निर्णय किया। उत्साह की कोई कमी नहीं थी और इस कार्य के लिये हर ओर से सहायता भेजी जाने लगी। तथापि यह अनुमान लगाया गया कि हाई स्कूल की स्थापना के लिये आठ लाख रुपये एकत्रित करने होंगे। सारी कोशिशों के बाद संस्था छै माह में केवल 27,000/- रु. एकत्रित कर सकी। संगठनकर्ता बहुत निराश हो उठे। इस संकटपूर्ण घड़ी में युवक हंसराज ने दयानन्द एंग्लो वैदिक शिक्षा हेतु अपना सम्पूर्ण जीवन अवैतनिक रूप से कार्य करने के लिये अर्पित कर दिया। इस त्यागपूर्ण समर्पण के पीछे उनके बड़े भाई की प्रेरणा तथा सहायता ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। वे खुशी के साथ अपनी आय में से उनके परिवार का भरण-पोषण करने के लिये तैयार हो गये। वास्तव में यह उच्च लक्ष्य के लिये आत्म बलिदान करने के समान था। तथापि इससे संगठनकर्ताओं को बहुत उत्साह

मिला और डी. ऐ. वी. हाई स्कूल तथा कॉलेज स्थापित करने का उनका स्वप्न साकार हो गया।

महात्मा हंसराज अत्यन्त सादा-सरल जीवन व्यतीत करते थे। मुझे उनके निवास स्थान पर भेंट करने का कई बार सुअवसर मिला। वह लकड़ी की चारपाई पर बैठा करते थे और उनसे भेंट करने वाले फर्श पर बिछी चादर पर।

महात्मा जी के निर्देशन में कार्य करने का सौभाग्य मुझे तीन बार प्राप्त हुआ। सोलह वर्ष से भी कम की अल्प आयु में, अपनी कक्षा के तीन साथियों के साथ मैंने आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा द्वारा संगठित अकाल पीड़ितों की सहायता के लिये उत्तराखंड में सेवा कार्य किया। जब महात्मा हंसराज को समाचार पत्रों द्वारा यह ज्ञात हुआ कि गढ़वाल में भीषण अकाल पड़ रहा है, महात्मा हंसराज ने आर्य समाजियों को सम्बोधित करते हुये सहायता की अपील की, जो कि केवल हमारे एक साप्ताहिक में प्रकाशित हुई। इस अपील का बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। अधिकांश आर्यसमाजी मध्यम आय वर्ग के होते थे। केवल कुछ लोगों ने ही एक हजार या इससे अधिक की राशि दान में दी परन्तु महात्मा जी द्वारा देश के कोने कोने से भेजे जाने वाले सैकड़ों (मनीआडर्स) धनादेशों पर हस्ताक्षर करते देखना एक प्रेरणा पूर्ण दृश्य होता था। उस किशोरावस्था में मेरे लिये समाज सेवा का यह एक बहुमूल्य अनुभव था।

सन् 1920 में उड़ीसा प्रदेश में घोर अकाल पड़ा। महात्मा हंसराज ने पुनः आर्य प्रादेशिक प्रतिनिध सभा द्वारा सहायता कार्य का अच्छे स्तर पर संगठन किया। जगन्नाथपुरी के निकट सखी गोपाल में आर्य समाजियों का सहायता केन्द्र स्थित था। मैने वहाँ श्री मोहन लाल के साथ कार्य किया। वह एक अत्यन्त समर्पित और उत्साही कार्यकर्ता थे। वह बाद में लाला लाजपत राय की "सर्वेन्ट्स ऑफ पिउपिल सोसायटी" के आजीवन सदस्य बन गये। वह जिस समर्पण और आत्म त्याग से अपने कर्तव्यों का पालन करते थे, वह मैं कभी नहीं भूल सकता। वहीं हम पंडित गोप बन्धु दास के निकट सम्पर्क में आये। हमें उनके गुरुकुल व्यवस्था पर आधारित सत्यवादी स्कूल के बारे में भी जानकारी पाने का अवसर मिला। बाद में पं० गोप बन्धुदास को उड़ीसा का बेताज बादशाह कहा जाता था। मैं जिस समय सखी गोपाल में था, मुझे अपने एक सहपाठी का पत्र मिला। इस पत्र में उसने सूचित किया था कि असहयोग आन्दोलन के सम्बन्ध में महात्मा

गॉन्धी लाहौर आये थे। वे लाला लाजपत राय की कोठी में ठहरे थे। उन्होंने विद्यार्थियों से 'कॉलेजेस्' का 'बॉयकाट' करने की अपील की थी। मेरे अनेकों मित्रों ने डी. ऐ. वी. कॉलेज छोड़ दिया और मैं भी उड़ीसा से लौटने के बाद कॉलेज नहीं गया।

सन् 1923 की गर्मियों में उत्तर प्रदेश के मलकाना राजपूतों में महान शुद्धि आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। महात्मा हंसराज ने इसमें अत्यधिक योगदान दिया। उन्होंने अपना केन्द्रीय कार्यालय आगरा स्थानान्तरित कर दिया। उनके नेतृत्व में यथेष्ट संख्या में स्वयं सेवक कार्य करते थे। इस आन्दोलन को स्वामी श्रद्धानन्द तथा आर्यसमाज के अन्य नेताओं ने भी पूरी सहायता दी। यह एक सुखद स्मृति है कि हमारे सनातन धर्म मित्रों ने भी इसमें अपना पूर्ण सहयोग दिया। वास्तव में, उनके एक प्रमुख नेता महामाहोपाध्याय पंडित गिरधर शर्मा ने भी अपना कार्यालय आगरा में स्थानान्तरित कर लिया ताकि वह मलकाना क्षेत्र के केन्द्र से शुद्धि आन्दोलन को सक्रिय सहयोग दे सकें। मुझे और कुछ स्वयं सेवकों को एक बहुत कठिन कार्य करने के लिये दिया गया था। मैनपुरी जिले में एक छोटा गाँव है कपूरपुरा। इसमें एक ही पूर्वजों के 20 मलकाना राजपूत हिन्दू परिवार तथा 20 मुसलमान मलकाना चौहान राजपूत परिवार रहते थे। जहाँगीर काल में इस गाँव के आधे निवासियों का बलपूर्वक धर्म परिवर्तन कर, मुसलमान बना दिया गया था। परन्तु वे उस समय तक अनेकों हिन्दू परम्पराओं को मानते आ रहे थे। महात्मा जी को सलाह दी गई थी कि 'चौहान' राजपूतों में बहुत उच्च स्थान रखते हैं और यदि ये कुछ मुसलमान चौहान मलकाना राजपूत परिवार हिन्दू धर्म अपनाने के लिये राजी कर लिये जायें तो इसका शुद्धि आन्दोलन पर अवश्य ही बहुत अच्छा प्रभाव पड़ेगा। लेकिन इसमें एक गम्भीर बाधा थी। इलाके के एक प्रमुख निवासी ठाकुर विशाल सिंह सुशिक्षित विद्वान और कट्टर सनातन धर्मी थे। वे शुद्धि आन्दोलन को सनातन धर्म के पूर्णतः विरुद्ध समझते थे। हमें जिले के एक प्रमुख राजपूत ठाकुर दिग्विजय सिंह का सक्रिय सहयोग प्राप्त था। मैं और मेरे साथी लगभग एक माह तक मैनपुरी जिले में कार्य करते रहे। हम ठाकुर विशाल सिंह के गाँव जो कि करीब 20 मील दूर था, जाया करते थे। उन्हें सन्तुष्ट करने की हमारी सभी कोशिशें बेकार हो गई। अन्त में वह इस बात पर सहमत हो गये कि अगर पं० गिरधर शर्मा स्पष्ट 'विज्ञप्ति' दें कि शुद्धि सनातन धर्म के विरुद्ध नहीं है;

ने अपना विरोध बन्द कर देंगे। मैं तत्काल आगरा पहुँचा और मेरी प्रार्थना पर पं० गिरधर शर्मा ने संस्कृत श्लोकों में एक विज्ञप्ति लिख कर दे दी। इससे ठाकुर विशाल सिंह सन्तुष्ट हो गये। इसके फलस्वरूप मलकाना मुसलमान राजपूतों को हिन्दू धर्म में स्वीकार कर लिया गया। उस समय तक मैं लाहौर वापस आ गया था। मुझे सूचित किया गया था कि हजारों लोगों द्वारा शुद्धि को एक महान उत्सव के रूप में मनाया गया। इसमें कई दिनों तक भजन-कीर्तन, पुनर्मिलन गीत गाये जाते रहे। इसमें महात्मा हंसराज, स्वामी श्रद्धानन्द तथा उत्तर प्रदेश के अनेकों राजाओं एवम् महत्वपूर्ण व्यक्तियों ने भाग लिया। एक छोटे से गाँव के इन कुछ परिवारों की शुद्धि से दूसरे क्षेत्रों में 'शुद्धि' के लिये कार्य करने वालों को महत्वपूर्ण सहायता मिली।

महात्मा हंसराज दिवस के पुण्य अवसर पर अनेक लेखों और विचारों का यह डी० ए० वी० परिवार की ओर से छोटा सा संकलन प्रस्तुत करते हुये मुझे बड़ी प्रसन्नता है। महात्मा जी ने जो बातें आज से साठ-सत्तर वर्ष पूर्व कहीं थी, वे आज भी सामयिक और सार्थक हैं। मुझे आशा है कि पाठक उनसे प्रेरणा लेंगे।

(प्रोफेसर) वेदव्यास

आर्यों के कर्त्तव्य

प्रथम आवश्यक बात – अपने-आपको मत छिपाओ :

आर्यसमाज की उन्नति के लिए सबसे पहली बात यह होनी चाहिए कि प्रत्येक आर्यसमाजी अपने-आपको सगर्व आर्यसमाजी घोषित करे। कहीं भी अपने आर्यत्व को छिपाने का प्रयत्न न करे। किसी भी प्रलोभन, भय अथवा डर के कारण अपने आर्यपन को तिलांजलि दे देना, आर्यसमाज के लिए अत्यन्त घातक है। संसार में जितने भी मत हैं, सबमें यह बात भली प्रकार पाई जाती है, जैसा कि हज़रत ईसा ने कहा है, "जो संसार में मुझसे इंकार करेगा, मैं प्रलय के दिन उससे इन्कार करूँगा।" इसका भाव यह है कि जो व्यक्ति ईसा का चेला होकर भय के कारण यह प्रकट करेगा कि मैं ईसाई नहीं हूँ तो प्रलय के दिन जब खुदा का दरबार लगेगा तो ईसा कहता है कि मैं उस दिन खुदा के सामने साक्षी देते समय इस तथ्य से इन्कार कर दूँगा कि यह ईसाई है, अर्थात् मैं उसके ईसाई होने से इन्कारी हो जाऊँगा। इस प्रकार वह नरक में भेजा जायेगा। इसी प्रकार मुसलमानों में भी अपने मत के सम्बन्ध में कठोर आज्ञा पाई जाती है। मुसलमानों में सम्भवतः सब कुकर्मों का प्रायश्चित सम्भव है, सब पाप क्षमा हो सकते हैं, परन्तु जो खुदा तथा उसके रसूल से इन्कार करे, वह कदापि क्षमा नहीं किया जा सकता। वह अवश्यमेव नरक की ज्वाला में जलता है।

बौद्धों में भी यह रीति थी कि जब कोई नया व्यक्ति बुद्ध-मत स्वीकार करता था तो उसे सब लोगों के सम्मुख इन तीन बातों की घोषणा करनी पड़ती थी

(1) मैं बुद्ध की शरण में जाता हूँ। (2) मैं धर्म की शरण में जाता हूँ। (3) मैं संघ की शरण में जाता हूँ। इस प्रकार उससे सार्वजनिक स्वीकृति ली जाती थी कि वह बुद्ध-मत में प्रविष्ट हो गया है।

सिखों में भी गुरु गोविन्दसिंह ने सिखों के लिए प्रत्यक्ष चिह्न नियत किये,

यद्यपि तब सिखों के लिए बड़ा विकट समय था। आजकल जैसे सर्प के मारनेवाले को पुरस्कार प्राप्त होता है, इसी प्रकार मुगल शासकों के काल में जो व्यक्ति सिख का सिर लाये, शासन की ओर से उसे पुरस्कृत किया जाता था। इस प्रकार सिख गाजर-मूली की भांति काटे जाते थे। इतनी यातनाओं के होते हुए भी गुरु ने सिखों के लिए अपने बाह्य धार्मिक चिह्न नियत करने आवश्यक समझे। वैदिक धर्म ने भी इस बात की पहचान के लिए कि अमुक व्यक्ति वैदिक धर्मी है, चिह्न नियत किये हैं : (1) शिखा रखना प्रत्येक वैदिक धर्मी के लिए, चाहे वह किसी भी वर्ण का हो, आवश्यक है। दूसरा चिह्न जो वैदिक धर्मियों के लिए नियत है, वह यज्ञोपवीत है। इसके अतिरिक्त तीसरा चिह्न जो कि आर्यों के लिए नियत है, वह प्राचीन ऋषिमुनियों की अभिवादन की विधि, एक शब्द अर्थात् 'नमस्ते' है।[1]

अतः सब मतों में यह शिक्षा दी गई है कि वे अपने धर्म अथवा विश्वास को कतई न छिपायें, प्रत्युत विपत्ति के समय सब छाती तानकर अपने मत को प्रकट करें। जिस प्रकार यह बात अन्य मतों के लिए आवश्यक है, वैसे ही आर्यसमाजियों के लिए भी आवश्यक है। जो व्यक्ति हृदय से तो आर्यसमाजी है परन्तु किसी दबाव के कारण आर्यसमाजी होने से इन्कारी है, वह आर्यसमाज को घोर हानि पहुँचाता है। ऐसे लोगों ने सचमुच आर्यसमाज को बहुत हानि पहुँचाई है। अतः ऐ आर्य भाइयो! तुम कभी अपने-आपको मत छिपाओ। जहाँ भी तुम्हें अवसर प्राप्त हो, तुम अपने-आपको प्रसिद्ध करो कि मैं आर्यसमाजी हूँ। अपने गृह पर कहो कि मैं आर्यसमाजी हूँ। अपने पिता से, अपनी माता से, सगे-सम्बन्धियों से, जहाँ तुम कार्य करते हो, वहाँ के सहयोगियों से, अपने मित्रों से और यदि अवसर प्राप्त हो तो अपने अधिकारियों तक से कह दो कि मैं आर्यसमाजी हूँ। तुम जहाँ जाओ, अपने आर्यपन को मत छिपाओ! सार्वजनिक रूप से कहो कि मैं आर्यसमाजी हूँ। स्मरण रखो जो व्यक्ति तनिक भय से आर्यसमाजी होने से इन्कार कर देता है, वह आर्यसमाज के लिए एक कलंक है तथा वह आर्यसमाज की कुछ सेवा भी नहीं कर सकता।

---

1. संसार में ऐसा असाम्प्रदायिक तथा वैज्ञानिक एवं भावपूर्ण और कोई अभिवादन नहीं है। 'नमस्ते' की विधि थोड़ा सिर झुकाकर, हाथ जोड़कर, हृदय से हाथ लगाकर की जाती है। भाव यह है कि अपने सिर की समस्त ज्ञानशक्ति से, भुजाओं के सब बल से, हृदय के सब भावों से आपका स्वागत करता हूँ।

आर्यों का दूसरा कर्त्तव्य – संध्या-प्रार्थना :

आर्यों के लिए दूसरी आवश्यक बात संध्या तथा प्रार्थना है। ये दोनों प्रत्येक आर्यसमाजी के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। इनसे धार्मिक जीवन में अत्यन्त लाभ होता है। प्रश्न होगा कि संध्या तथा प्रार्थना से क्या बनता है? वाटरवर्क्स से, जिसके साथ ही नल लगे हुए हैं जो नगर के चारों ओर पानी पहुँचाते हैं, नगर के एक सिरे से दूसरे सिरे तक जल जाता है। यदि वे नल मार्ग में कहीं टूट जाएँ तो क्या होगा? तुम टूटी को भले ही कितना घुमाओ, जल नहीं निकलेगा। इसका क्या कारण है? कारण यह है कि जलाशय से इस टूटी का सम्बन्ध टूट गया है। यही स्थिति तार (Telegraph) की है। एक व्यक्ति एक स्थान पर बैठा सहस्रों कोस तक समाचार पहुँचाता है। परन्तु, यदि मार्ग में कहीं तार टूट जाये अथवा समाचार लेने वाले को ही कहीं दूर बिठा दिया जाए तो भले ही कितनी शक्ति लगा दो, तार का समाचार नहीं आएगा। इसका अर्थ भी वही है कि तार अपने स्रोत से दूर हो गया है।

अतः जिस प्रकार नल में जल आने के लिए यह आवश्यक है कि इसका संबंध जलाशय से जुड़ा रहे, इसी प्रकार तार के समाचार के लिए यह आवश्यक है कि वह भी अपने स्रोत से जुड़ा रहे। इसी प्रकार मनुष्य में बल, शक्ति तथा ज्ञान की लहर चलाने तथा उसे प्रवाहित रखने के लिए आवश्यक है कि उसका सम्बन्ध भी सब शक्तियों के भण्डार तथा ज्ञान के स्रोत परमात्मा से जुड़ा रहे तथा यह क्रम टूटने न पाये। वेद में कहा है :

तेजोऽसि तेजो मयि धेहि। वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि ।।

यजु० 19-9

'तू तेज है, वीर्य का स्रोत है तथा बल का भण्डार भी तू ही है।' इस प्रकार जब हम अपने विचारों के द्वारा परमात्मा के साथ अपना सम्बन्ध बनाए रखेंगे, उसके साथ अपना नाता जोड़ लेंगे तो इसका परिणाम यह होगा कि हममें शक्ति, बल तथा ज्ञान की शक्तियाँ आती रहेंगी, जो प्रतिक्षण हमें प्रसन्न रखेंगी तथा हमारे प्रफुल्लित होने में सहायता प्रदान करेंगी। परमेश्वर के साथ ऐसा सम्बन्ध प्रार्थना के द्वारा ही बना रह सकता है। प्रार्थना में इस बात का अवश्य ध्यान रखो कि तुम परमात्मा को सर्वत्र व्यापक जानो तथा समझो कि वह तुम्हारी प्रत्येक बात को भली प्रकार से सुन रहा है, जैसा कि संध्या के मन्त्रों में कहा है

प्राची दिगग्निरधिपति.............आदि-आदि

'हे ईश्वर! तू पूर्व की ओर विद्यमान है, तू पश्चिम की ओर भी है, तू उत्तर की ओर है तथा तू दक्षिण की ओर भी है, तू नीचे विद्यमान है तथा साथ ही तू ऊपर भी है।' इस प्रकार परमात्मा को सर्वव्यापक जानकर उससे सम्बन्ध जोड़ो। उस परमात्मा को अनुभव करने का अभ्यास सदा करते रहो ताकि यह क्रम टूट न जाये, प्रत्युत अधिक दृढ़ होकर तुम्हारे लिए अधिक आनन्द तथा सुख का कारण हो।

प्रार्थना के अमृत में विष मत घोलो

परमात्मा की प्रार्थना करने में इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ईर्ष्या तथा द्वेष की प्रार्थना कभी स्वीकार नहीं होती। उदाहरण के लिए यदि एक विद्यार्थी यह प्रार्थना करे कि अमुक विद्यार्थी कक्षा में मुझसे पीछे (नीचे) रह जाये तथा मैं उससे ऊपर हो जाऊँ तो यह प्रार्थना पूरी न होगी। अथवा, यदि एक व्यक्ति यह प्रार्थना करे कि मेरा शत्रु नष्ट हो जाये तो ऐसी प्रार्थना भी स्वीकार न होगी, क्योंकि परमात्मा के लिए दोनों एक ही जैसे हैं। ऐसी प्रार्थनाएँ करने से स्वयं अपनी ही हानि होती है। परमात्मा से किस प्रकार की प्रार्थना करनी चाहिए? अपने मन की शुद्धि, ज्ञान की प्राप्ति तथा शुभ कामनाओं के लिए परमात्मा से प्रार्थना करनी चाहिए।

सबकी उन्नति के चिन्तक की उन्नति माँगो

प्रार्थना में एक बात यह भी सम्मिलित कर लेनी चाहिए कि हे परमेश्वर! आर्यसमाज की उन्नति हो, वैदिक धर्म का प्रचार हो। इससे आपके देश का भला होगा। यह आर्यसमाज परमात्मा की आज्ञा को फैलाने के लिए एक साधन (Agency) है। इसकी जितनी उन्नति होगी, उतनी ही संसार में ईश्वर की आज्ञा बढ़ेगी (अर्थात् ईश्वर की आज्ञा के पालन का भाव बढ़ेगा)।

प्रार्थना तथा उपासना के लिए यह बात भी स्मरण करने योग्य है कि प्रार्थना के लिए समय नियत करना चाहिए और उसी समय प्रार्थना करनी चाहिए। यह हमारा दुर्भाग्य है कि हमारा कोई कार्य भी समय पर नहीं होता है। परन्तु जो लोग समय पर सोते हैं, समय पर भोजन करते हैं, उन्हें ज्ञात होगा कि जब उनके सोने अथवा खाने का समय होता है, ठीक उसी समय उन्हें निद्रा लगती है अथवा पेट में भूख के कारण गड़बड़ फैल जाती है। इस प्रकार यदि प्रार्थना के लिए भी समय नियत कर दिया जाये तो इसका परिणाम यह होगा कि उस समय हमें प्रार्थना का

ही ध्यान आएगा तथा इस प्रकार ध्यान परमात्मा में शीघ्र लग जाएगा। इसके विपरीत, यदि समय नियत न किया जाए तो परिणाम यह होगा कि कुछ दिन हमें प्रार्थना का ध्यान ही न रहेगा और इस प्रकार नाग़ा (अवकाश) पड़ जायेगा, इसलिए प्रार्थना में रुचि भी न हो सकेगी।

प्रार्थना किस समय करें?

ब्राह्मण-ग्रंथों में लिखा है कि हवन सूर्योदय से पूर्व करना चाहिए, दूसरे स्थान पर लिखा है कि सूर्योदय के पश्चात् करना चाहिए, और तीसरे स्थान पर यह भी लिखा है कि सूर्योदय के मध्य करना चाहिए। ये तीन विभिन्न सम्मतियाँ ऋषियों ने दी हैं। इनको पढ़कर प्रश्न उत्पन्न होता है कि इन तीन में से कौन-सी सम्मति उचित है? इसका उत्तर भी ऋषि देते हैं कि प्रार्थना तथा हवन आदि तुम इन समयों में चाहे किसी समय करो, परन्तु जिस समय करना आरम्भ करो सदा उसी समय ही किया करो। यदि तुम सूर्योदय से पूर्व प्रार्थना अथवा हवन करते हो तो उसी समय ही किया करो और यदि उस से पश्चात अथवा मध्य में आरम्भ करते हो तो सदा ऐसा ही करते रहो, आदि। इसकी भी यही विधि है कि संध्या व उपासना के लिए समय नियत करना अत्यन्त आवश्यक है और उस समय प्रार्थना के अतिरिक्त किसी और बात का ध्यान न होना चाहिए।

फिर प्रार्थना व संध्या श्रद्धा तथा प्रेम के साथ करनी चाहिए, यह नहीं कि संध्या करने बैठे तो पांच मिनट में ही समाप्त कर दी। स्वामी जी ने 'सत्यार्थप्रकाश' में लिखा है कि एक घण्टा प्रातः तथा एक घण्टा सायं प्रार्थना करनी चाहिए। संध्या करते समय जो शब्द हम मुख से बोलें, उनका हमारे हृदय पर प्रभाव होना चाहिए, जैसे जब हम **भूर्भुवः स्वः**' पढ़ रहे हों तो उस समय हमारे मन में वैसे ही विचार आने चाहिए। जल्दी-जल्दी पाठ कर लेने से संध्या के शब्दों का हृदय पर कोई प्रभाव नहीं होता।

तीसरी आवश्यक बात – स्वाध्याय :

तीसरी बात जो आर्यसमाजी के जीवन के लिए आवश्यक है, वह **'स्वाध्याय'** है। शास्त्रों में स्वाध्याय की इतनी महिमा है कि अन्य किसी विषय को इतना महत्त्व नहीं दिया गया। 'सत्यार्थप्रकाश' में स्थान-स्थान पर इसकी पुष्टि की गई है कि स्वाध्याय करो। एक बार इस बात को बारह बार दोहराया है। जब

ब्रह्मचारी विद्या समाप्त करके आचार्य से विदा होता है तो उस समय भी ब्रह्मचारी सब-कुछ जानता है, फिर भी आचार्य उसे यह शिक्षा अवश्य देता है कि स्वाध्याय से विमुख मत रहना! स्वाध्याय में प्रमाद मत करना! इस प्रकार स्वाध्याय आर्यों के लिए बड़ा आवश्यक है?[1]

स्वाध्याय का अशुद्ध अर्थ :

खेद है कि आजकल लोगों ने स्वाध्याय के अशुद्ध अर्थ ले लिए हैं। कोई व्यक्ति सारा दिन उपन्यास पढ़ता रहता है, वह समझता है कि उसने स्वाध्याय कर लिया। कोई व्यक्ति कोई अंग्रेज़ी पुस्तक पढ़कर यह समझ लेता है कि उसने स्वाध्याय कर लिया। कोई और नैतिक पुस्तक पढ़कर ही स्वाध्याय समाप्त कर लेता है। इनमें से अश्लील उपन्यासों का अध्ययन तो कतई स्वाध्याय नहीं है और अन्य पुस्तकों को पढ़ना भी अत्यन्त निम्न स्तर का स्वाध्याय है। शास्त्रों में लिखा है कि '**स्वाध्याय परमेश्वर की वाणी के पाठ को कहते हैं।**' अतः प्रत्येक आर्यसमाजी को अपने घर में वेदों के ग्रन्थ रखने चाहिए तथा वे अलमारियों में बन्द न रहें, प्रत्युत उनका पाठ भी होना चाहिए। जिन लोगों का इतना सौभाग्य नहीं कि वे वेद मन्त्रों के अर्थ समझ सकें, उनके लिए स्वामी जी का वेदभाष्य उपलब्ध है। वे स्वामी जी के आर्य भाषा के वेदभाष्य का ही स्वाध्याय करें। स्वाध्याय में यह आवश्यक नहीं है कि एक दिन में दस-दस पन्द्रह-पन्द्रह मंत्रों को पढ़ डाला जाये तथा उनको समझा न जाये, प्रत्युत एक मन्त्र पढ़ा जाये तथा उसका अर्थ जानने का यत्न किया जाये। इस प्रकार उसे समझा जाये, फिर उसको अपने जीवन में ढाला जाये, तब जाकर स्वाध्याय से लाभ होगा। केवल पाठमात्र से इतना लाभ न होगा।

दूसरी कोटि का स्वाध्याय ऋषिकृत ग्रन्थों का पठन-पाठन है, परन्तु अश्लील उपन्यासों का पढ़ना अत्यन्त बुरा है। विशेषरूप से विद्यार्थियों को इससे बचना चाहिए। विद्यार्थियों के लिए ऐसे उपन्यासों का पढ़ना विष-जैसा प्रभाव रखता है। इसलिए ब्रह्मचारियों को इस प्रकार की सब पुस्तकों से बचना चाहिए।

चौथी आवश्यक बात – सत्संग :

आर्यों के लिए चौथी आवश्यक बात सत्संग है। ईसाई लोग अपने चर्च में

1. प्रतीत होता है यहाँ महात्मा जी का तैत्तिरीय उपनिषद् के नवम अनुवाक 'ऋतं च स्वाध्याय प्रवचने च...' मन्त्र की ओर संकेत है।

जाकर सत्संग करते हैं। मुसलमान भी मस्जिद में जाकर इकट्ठे नमाज पढ़ते हैं। ऋषि दयानन्द ने भी सत्संग पर बड़ा बल दिया है। यह जो आर्यसमाज की साप्ताहिक बैठक है, यह सत्संग ही तो है। इसमें हम सम्मिलित होकर दूसरे बुजुर्गों के उपदेश सुनते हैं। परस्पर मेल-मिलाप से हमारा ज्ञान बढ़ता है, परस्पर सहायता की इच्छा उत्पन्न होती है। संसार में कुछ ऐसे व्यक्ति भी हैं, जो यह कहते हैं कि सत्संग की क्या आवश्यकता है, मनुष्य अपनी उन्नति स्वयं कर सकता है। यदि कोई ऐसा व्यक्ति है तो मैं उसे मनुष्य न समझूँगा। मैं समझूँगा कि वह कोई देवता अथवा ऋषि है। कारण, मनुष्य तो कम-से-कम एक-दूसरे की सहायता के बिना निर्वाह नहीं कर सकता। हम बात-बात में दूसरों की सहायता पर निर्भर हैं। हमारा भोजन, वस्त्र आदि सब-कुछ दूसरों की सहायता से ही तैयार होता है, फिर हम कैसे कह सकते हैं कि हम दूसरों की सहायता पर निर्भर नहीं?

सत्संग के सम्बन्ध में एक आवश्यक निर्देश :

सत्संग के सम्बन्ध में हमारा यह विचार होना चाहिए कि हमारी संगति अच्छे-से-अच्छे व्यक्तियों के साथ हो। मित्रता बनाते समय प्रत्येक आर्य भाई को इस बात का विचार रखना चाहिए कि उसकी मित्र-मण्डली में अधिक संख्या आर्यसमाजियों की ही हो। कल्पना करो कि दो आर्यसमाजियों की मित्रता है, जिनमें से दूसरे के चार मित्र ऐसे हैं, जो आर्यसमाजी नहीं है। अब जिसके चार मित्र आर्यसमाजी नहीं हैं और एक आर्यसमाजी है, उसके विचार में परिवर्तन आना आवश्यक है। इसलिए ऐसे व्यक्ति से मित्रता पैदा करनी चाहिए, जो कि आर्यसमाजी हों तथा अन्य लोगों को आर्यसमाजी विचार का बना लेना चाहिए। हमें सदा आर्यों से ही सम्बन्ध स्थापित करने चाहिए तथा धन-सम्पदा एवं प्रतिष्ठा का विचार कम करना चाहिए।

नाता किनसे जोड़े :

आजकल क्या देखने में आता है कि बिरादरियों के बन्धन में जकड़े हुए आर्य भाई अपनी पुत्रियाँ ऐसे घरों में दे देते हैं, जहाँ कि पति आर्यसमाजी नहीं होता। परिणाम यह होता है कि वे स्वयं भी कष्ट उठाते हैं, कन्या के लिए भी कष्ट का कारण बनते हैं तथा आर्यसमाज के लिए भी इससे बुरे परिणाम निकलते हैं। अतः अपने नाते-सम्बन्धों तथा वैवाहिक सम्बन्धों में आर्यसमाज का ही अधिक

विचार रखना चाहिए। अन्य बिरादरियों तथा धन-सम्पदा का कम विचार करना चाहिए।

पाँचवीं आवश्यक बात – संग्राम :

पाँचवी आवश्यक बात प्रत्येक आर्य भाई के लिए जो है, वह संग्राम है। संग्राम का अर्थ है लड़ाई। परन्तु क्या लड़ाई का अर्थ एक-दूसरे की पगड़ियाँ उतारना है? क्या यह लड़ाई उचित है? मेरा भाव इस लड़ाई से नहीं है। मेरा तात्पर्य यह है कि प्रत्येक मनुष्य के मन में भले या बुरे दो प्रकार के विचार उत्पन्न होते हैं। भले-से-भले मनुष्य में भी यदि वह देवता या ऋषि नहीं है, कभी-न-कभी बुरा विचार आ ही जाता है, तथा बुरे-से-बुरे मनुष्य में भी जो विषय की गहरी गन्दी दलदल में फँसा होता है, उसमें भी कभी-कभी पवित्र विचार आ सकते हैं। अन्तर केवल यह है कि श्रेष्ठ मनुष्य में बुरे विचार कम आते हैं और बुरे मनुष्यों में श्रेष्ठ विचारों की न्यूनता होती है। ये शुभ-अशुभ विचार मानव-जीवन में संग्राम करते रहते हैं। हमारा कर्त्तव्य यह है कि हम श्रेष्ठ विचारों को बढ़ाते जायें बुरे विचारों को कम करने का यत्न करें। इसका नाम संग्राम है। प्रत्येक व्यक्ति को चाहिए कि वह संग्राम में प्रविष्ट हो। वह नित्य अपने विचारों को शुद्ध रखने का प्रयत्न करे तथा बुरे विचारों को निकालने का यत्न करे।

छठी आवश्यक बात – समीक्षा :

आर्यसमाज के लिए छठी आवश्यक बात समीक्षा है, अर्थात् इस बात का पता लगाना कि हमने कहाँ तक उन्नति की है, किस स्तर तक हम धार्मिक जीवन में आगे बढ़े हैं, हमारे धार्मिक जीवन में क्या परिवर्तन आया है। यह इसलिए आवश्यक है कि यदि हम प्रयत्न करते जायें, परन्तु हमें यह ज्ञात न हो कि हमने कहां तक उन्नति की है, तो हमें इससे लाभ नहीं पहुँच सकता। अतः सदा अपना एक उद्देश्य नियत करके उसकी ओर बढ़ना चाहिए।

ये बातें जिन पर एक-एक करके आर्यसमाजियों को आचरण करना चाहिए। इन पर आचरण करने से उनकी दिन-दुगुनी रात-चौगुनी उन्नति होगी तथा आर्यसमाज एवं वैदिक धर्म का बोलबाला होगा।

प्रेरक विचार

जगत्पिता का उपदेश : पिता के समान कृपाकारक परमेश्वर सब जीवों के हित और सब विद्याओं की प्राप्ति के लिए कल्प-कल्प के आदि में वेद का उपदेश करता है। जैसे पिता व अध्यापक अपने पुत्र व शिष्य को शिक्षा देता है कि 'तू ऐसा कर' व 'ऐसा वचन कह', 'सत्य वचन बोल' इत्यादि शिक्षा को सुनकर बालक व शिष्य भी कहता है कि सत्य बोलूँगा, पिता और आचार्य की सेवा करूँगा, झूठ न कहूँगा, इसी प्रकार जैसे परस्पर शिक्षक लोग शिष्य व लड़कों को उपदेश करते हैं, वैसे ही वेदमन्त्रों में भी जानना चाहिए।

कैसे आगे बढ़ें :व्यापक परमेश्वर अपनी सत्ता से यज्ञ की निरन्तर रक्षा करता है, इसी से वह अच्छे-अच्छे गुणों के देने का हेतु होता है। इसी प्रकार ईश्वर ने दिव्य गुण-युक्ति अग्नि को भी रचा है कि जो उत्तम शिल्प-विद्या को उत्पन्न करने वाला है। उन गुणों को केवल धार्मिक, उद्योगी और विद्वान् मनुष्य ही प्राप्त होने के योग्य होता है।

न भूलें तुम्हें भूलकर नाथ प्यारे: हे सबको देखने और सबमें व्याप्त होने वाले उपासना के योग्य परमेश्वर! हम लोग सब कर्मों के करने में एक क्षण भी आपको नहीं भूलते, इसी से हम लोगों की अधर्म करने में कभी इच्छा नहीं होती, क्योंकि जो सर्वज्ञ तथा सबका साक्षी परमेश्वर है, वह हमारे सब कामों को देखता है।

सर्वद्रष्टा प्रभु: हे सबको देखने और सबमें व्याप्त होने वाले उपासना के योग्य परमेश्वर! हम लोग सब कर्मों को करते हुए एक क्षण भी आपको नहीं भूलते, इसी से हम लोंगो की अधर्म करने में कभी इच्छा नहीं होती, क्योंकि जो सर्वज्ञ तथा सबका साक्षी परमेश्वर है, वह हमारे सब कामों को देखता है।

विज्ञान में विहार करते हुए: जैसे विनाश और अज्ञान आदि दोषरहित परमात्मा अपने अन्तर्यामी रूप से सब जीवों को सत्य का उपदेश तथा श्रेष्ठ विद्वानों और सब जगत् की रक्षा करता हुआ अपनी सत्ता और परम आनन्द में प्रवृत्त हो रहा है, वैसे ही परमेश्वर के उपासक श्री से आनन्दित तथा वृद्धियुक्त होकर विज्ञान में विहार करते हुए परम् आनन्दरूप विशेष फलों को प्राप्त होते हैं।

ईश की प्राप्तिः सब मनुष्यों को उचित है कि जो सब कार्य-जगत् की उत्पत्ति करने में आदि कारण परमेश्वर उसको शुद्ध-विज्ञान से साक्षात् करना चाहिए; ऐसा किये बिना कोई भी इसको प्राप्त नहीं कर सकता।

दुर्जन-दलन की चाह होः जो मनुष्य दुष्टों को युद्ध से निर्बल कर तथा जितेन्द्रिय विद्वान् होकर जगदीश्वर की आज्ञा का पालन करता है, वही उत्तम धन और युद्ध में विजय को प्राप्त करता है।

प्रभु कर्मफल-प्रदाताः हे मित्र विद्वान् लोगो! अत्यन्त उत्तम आकाश से लेकर पृथ्वी पर्यन्त असंख्य पदार्थों को रचने में समर्थ, दुष्ट स्वभाव वाले जीवों को ग्लानि प्राप्त कराने वाले और श्रेष्ठ जीवों को सब ऐश्वर्य देने वाले परमेश्वर के गुणों का अच्छी प्रकार उपदेश करो।

बल और पौरुष के बिनाः जब तक मनुष्य लोग परमेश्वर को अपना इष्टदेव समझने वाले और बलवान् अर्थात पुरुषार्थी नहीं होते, तब तक उनकी दुष्ट शत्रुओं को निर्बल करने की सामर्थ्य भी नहीं होती।

परमार्थ के लिए पुरुषार्थ करेंः जिसकी सत्ता से संसार के पदार्थ बलवान् होकर अपने-अपने व्यवहारों में वर्तमान हैं, उन सब बल आदि गुणों से उपकार लेकर विश्व के नाना प्रकार के सुख भोगने के लिए हम लोग पूर्ण पुरुषार्थ करें तथा ईश्वर इस प्रयोजन में हमारा सहाय करें, इसलिए हम लोग ऐसी प्रार्थना करते हैं।

बिना अपराध किसी को पीड़ा मत दोः कोई मनुष्य अन्याय से किसी प्राणी को मारने की इच्छा न करे, किन्तु परस्पर सब मित्रभाव बर्तें, क्योंकि जैसे परमेश्वर बिना अपराध किसी का तिरस्कार नहीं करता, वैसे ही सब मनुष्यों को भी करना चाहिए।

:2:

सूर्य और वायु के उपकार लो: ईश्वर उपदेश करता है कि मनुष्यों को वेदमन्त्रों के विचार से सूर्य और वायु आदि पदार्थों के गुणों को अच्छी प्रकार जानकर सबके सुख के लिए प्रयत्न के साथ उनसे उपकार लेना चाहिए।

ईश्वर-आज्ञा का पालन: जो मनुष्य अपनी दृढ़ता से सत्य विद्या का अनुष्ठान और नियम से ईश्वर की आज्ञा का पालन करता है, उसकी आत्मा में से अविद्यारूपी अन्धकार का नाश अन्तर्यामी परमेश्वर कर देता है, जिससे वह पुरुष धर्म और पुरुषार्थ को कभी नहीं छोड़ता।

मनुष्य ही परमेश्वर को प्राप्त कर सकता है: मनुष्य ही परमेश्वर को प्राप्त हो सकते हैं, क्योंकि वे ज्ञान की वृद्धि करने के स्वभाववाले होते हैं और धर्मात्मा ज्ञानवाले मनुष्यों का परमेश्वर को प्राप्त होने का स्वभाव है, तथा ईश्वर से रचे जाकर कक्षा में स्थापन किया हुआ जो सूर्य व अपने सामने अर्थात् समीप के लोगों को चुम्बक पत्थर, लोहे के समान खींचने को समर्थ होता है।

धार्मिक तथा पुरुषार्थी सत्कार के योग्य: ईश्वर की आज्ञा है कि जो मनुष्य पुरुषार्थी होकर सबके उपकार करने वाले और धार्मिक होते हैं, वही पूर्ण ऐश्वर्य की रक्षा करके सर्वत्र सत्कार के योग्य होते हैं।

सृष्टि-रचयिता की स्तुति: जैसे इस संसार में अच्छे पदार्थों की रचना विशेष देखकर उस रचने वाले की प्रशंसा होती है, वैसे ही संसार के प्रसिद्ध और अप्रसिद्ध अत्युतम सूर्यादि पदार्थों तथा विशेष रचना को देखकर ईश्वर को धन्यवाद दिये जाते हैं, इस कारण से परमेश्वर की स्तुति के समान व उससे अधिक किसी की स्तुति नहीं हो सकती।

ईश्वर के अनुग्रह तथा अपने पुरुषार्थ से सुखों में वृद्धि: मनुष्यों को ईश्वर के अनुग्रह और अपने पुरुषार्थ से सबकी आत्मा और शरीर के सुख के लिए विद्या और ऐश्वर्य की प्राप्ति व उनकी रक्षा और उन्नति तथा सत्य मार्ग व उत्तम दानादि धर्म अच्छी प्रकार से सदैव सेवन करने चाहिएँ, जिससे दारिद्रय और आलस्य से उत्पन्न होने वाले दुःखों का नाश होकर अच्छे-अच्छे भोग करने योग्य पदार्थों की वृद्धि होती रहे।

:3:

विद्या से लोक आलोक: सब मनुष्यों को विद्या पढ़ने के पीछे उत्तम क्रियाओं की कुशलता में प्रवृत्त होना चाहिए। जैसे सूर्य का उत्तम प्रकाश संसार में वर्तमान है, वैसे ही ईश्वर के गुण और विद्या के प्रकाश का सबमें उपयोग करना चाहिए।

सुख तथा गुण-सम्पन्नता के लिए प्रभु से प्रार्थना: सब मनुष्यों को उचित है कि सब सुख और शुभ गुणों की प्राप्ति के लिए परमेश्वर की ही प्रार्थना करें, इतर की नहीं। क्योंकि उस अद्वितीय सर्वमित्र, परम ऐश्वर्य वाले अनन्त शक्तिमान् ही को उक्त पदार्थों के देने में सामर्थ्य है।

जिसके गुण और कर्म का अन्त नहीं वह प्रभु अनन्त है: जब कोई पूछे कि ईश्वर कितना बड़ा है, तो उत्तर यह है कि जिसको सब आकाश आदि बड़े-बड़े पदार्थ भी घेरे में नहीं ला सकते, क्योंकि वह अनन्त है, इससे सब मनुष्यों को उचित है कि उसी परमात्मा का सेवन उत्तम-उत्तम कर्म करने और श्रेष्ठ पदार्थों की प्राप्ति के लिए उसी की प्रार्थना करते रहें। जब जिसके गुण और कर्मों की गणना कोई नहीं कर सकता, तो कोई उसके अन्त पाने को समर्थ कैसे हो सकता है?

परमेश्वर की आज्ञा-पालन व शूरवीरों से मित्रता: जो मनुष्य परमेश्वर में, उसकी आज्ञा के पालने में तथा शूरवीर आदि मनुष्य में नित्य मित्रभाव अर्थात् प्रीति रखते हैं, वे बलवाले होकर किसी मनुष्य से पराजय व भय को प्राप्त कभी नहीं होते।

यह सब प्रभु का प्रताप है: मनुष्यों को इस संसार में ईश्वर के रचे हुए पदार्थों को देखकर यह कहना चाहिए कि यह सब धन्यवाद और स्थिति ईश्वर ही में घटती है।

:4:

बिजली व प्राणरूप वायु का भोग: मनुष्यों को परमेश्वर प्रतिदिन उपासना करने योग्य है और उसकी आज्ञा के अनुकूल वरतना चाहिए। बिजली तथा जो प्राण-रूप वायु है, उसकी विद्या से पदार्थों का भोग करना चाहिए।

सुखदाता परमेश्वर की उपासना करो: ईश्वर में यह सामर्थ्य सदैव रहती है कि पुरुषार्थी धर्मात्मा मनुष्यों को उनके कर्मों के अनुसार सब कामनाओं से पूर्ण करना तथा संसार में परम उत्तम-उत्तम पदार्थों का उत्पान तथा धारण करके सब प्राणियों को सुखयुक्त करता है, उससे सब मनुष्यों को उसी परमेश्वर की नित्य उपासना करनी चाहिए।

प्रभु का यज्ञरूप संसार: जिस कारण परमेश्वर सकल संसार को रचता है, इससे सब पदार्थ परस्पर अपने-अपने संयोग से बढ़ते हैं और ये पदार्थ क्रियामय यज्ञ और शिल्प-विद्या में अच्छी प्रकार संयुक्त किये हुये बड़े-बड़े सुखों को उत्पन्न करते हैं।

सर्वत्र व्यापक प्रभु को जानकर सुख पायें: जैसे मनुष्य सब जगह विस्तृत हुए सूर्य आदि के प्रकाश को देखता है, वैसे ही सब जगह व्याप्त प्रकाशरूप परमेश्वर को जानकर सुख के विस्तार को प्राप्त होता है।

प्रभु की रचना से लाभ उठाओं: जैसे विद्वान् मनुष्य परमेश्वर की स्तुति करके उसकी आज्ञा का आचरण करता है, वैसे तुम लोगों को भी उचित है कि उस परमेश्वर के रचे संसार में अनेक प्रकार के उपकार ग्रहण करो।

प्रभु की रचना तथा विद्वानों का उपदेश: विद्वानों के उपदेश के बिना किसी मनुष्य को यथावत् सृष्टि-विद्या-बोध कभी नही हो सकता। ईश्वर के उत्पादन करने के बिना किसी पदार्थ का साकार होना नहीं बन सकता, और इन दोनों कारणों के जाने बिना कोई मनुष्य पदार्थों से उपकार लेने को समर्थ नहीं हो सकता।

सृष्टि-रचयिता वही एक प्रभु है: परमेश्वर ने इस संसार में तीन प्रकार का जगत् रचा है अर्थात् एक पृथ्वीरूप, दूसरा अन्तरिक्ष, आकाश में रहनेवाला प्रकृतिरूप प्रमाण, और तीसरा प्रकाशमय सूर्यादि लोक; ये तीन आधाररूप हैं। इनमें से आकाश में वायु के आधार से रहनेवाला जो कारण-रूप है वही पृथ्वी और सूर्यादि लोकों को बढ़ानेवाला है और इस जगत् को ईश्वर के बिना कोई बनाने को समर्थ नहीं हो सकता, क्योंकि किसी की ऐसी सामर्थ्य ही नहीं।

जिसने सारे विश्व को धारण किया हुआ है: ईश्वर के धारण के बिना किसी पदार्थ की स्थिति होने का सम्भव नहीं हो सकता, उसकी रक्षा के बिना किसी के व्यवहार की सिद्धि भी नहीं हो सकती।

जीव कर्म करने में स्वतन्त्र, फल भोगने में प्रभु की व्यवस्था में: मनुष्य लोग जैसा कुछ पाप व पुण्य करते हैं, सो-सो ईश्वर अपनी न्याय-व्यवस्था से उनको प्राप्त कराता ही है।

सब प्राणियों को पिछले जन्मों में किये हुए पुण्य व पाप का फल वायु, जल और अग्नि आदि पदार्थों के द्वारा इस जन्म व अगले जन्म में प्राप्त होता ही है।

किसी वस्तु की उपासना, ईश्वर की उपासना नहीं हो सकती: मनुष्यों को योग्य है कि जो सबका प्रकाशक, सकल जगत् को उत्पन्न व सबकी रक्षा करने वाला जगदीश्वर है, वही सब समय में उपासना करने योग्य है, क्योंकि उसको छोड़कर अन्य किसी की उपासना करके ईश्वर की उपासना का फल चाहे तो कभी नहीं हो सकता, इससे इसकी उपासना के विषय में कोई भी मनुष्य किसी दूसरे पदार्थ का स्थापन कभी न करे।

सब लोकों को गति देने वाला गति नहीं करता: ईश्वर की अनन्त सामर्थ्य होने से उसका परिणाम व बराबरी कोई नहीं कर सकता है। ये सब लोक चलते हैं, परन्तु लोकों के चलने से उनमें व्याप्त ईश्वर नहीं चलता, क्योंकि जो सब जगह पूर्ण है, वह कभी नहीं चलेगा। इस ईश्वर की उपासना को छोड़कर किसी जीव का पूर्ण अखण्डित राज्य व सुख कभी नहीं हो सकता। इससे सब मनुष्यों को प्रमेय व विनाश-रहित परमेश्वर की उपासना करने योंग्य है।

मिट जायें त्रय ताप यदि तू....: जो ईश्वर की आज्ञा का यथावत् नित्य पालन करते हैं वे ही पवित्र और सब दुःख बन्धनों से अलग होकर सुखों को निरंतर प्राप्त होते हैं

ईश्वरीय न्याय नित्य एवं शाश्वत है: हे भगवान्! जगदीश्वर! जैसे पिता आदि विद्वान् और राजा छोटे-छोटे अल्पबुद्धि उन्मत बालकों पर करुणा, न्याय और शिक्षा करते हैं, वैसे ही प्रभुपिता प्रतिदिन हमारे न्याय, करुणा और शिक्षा करनेवाले हैं।

समय का सदुपयोग करो: जैसे परमेश्वर सर्वज्ञ होने से सब लोक व काल की व्यवस्था को जानता है, वैसे मनुष्यों को सब लोक तथा काल की महिमा को जानकर इसका एक क्षण भी व्यर्थ नहीं खोना चाहिए।

सभी के भले की करो कामनाएँ: जैसे धार्मिक परोपकारी विद्वान् होकर

ईश्वर की प्रार्थना करते हैं, जगदीश्वर उनके सब दुःख बन्धनों को छुड़ाकर सुखयुक्त करता है, वैसे ही हम लोगों को क्यों न करना चाहिए!

:6:

सब सत्य विद्याओं को जानें: मनुष्यों को योग्य है कि ईश्वर ने इस संसार में जितने पदार्थ उत्पन्न किये हैं, उनके जानने के लिए विद्याओं का सम्पादन करके कार्यों को सिद्ध करें।

हो भद्र भाव भरपूर, दूर अघ होंगे: मनुष्यों को इस प्रकार ईश्वर की प्रार्थना करनी चाहिए कि हे परमात्मन्! आप लोगों से जो दुष्ट व्यवहार अर्थात् खोटे चलन तथा जो हमारे शत्रु हैं, उनको दूर कर हम लोगों के लिए सकल ऐश्वर्य दीजिये।

ईश-कृपा से मुनियों-गुणियों का सत्संग: जब मनुष्य सत्य भाव से अच्छे मार्ग को प्राप्त होना चाहते हैं, तब जगदीश्वर उनको उत्तम ज्ञान का प्रकाश करने वाले विद्वानों का संग होने के लिए प्रीति और जिज्ञासा, अर्थात उनके प्रति देश के जानने की इच्छा उत्पन्न करता है, इससे वे श्रद्धालु हुए अत्यन्त दूर भी बसनेवाले सत्यवादी योगी विद्वानों के समीप जाकर, उनका संग कर अभीष्ट बोध को प्राप्त होकर धर्मात्मा होते हैं। :

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि?: मनुष्यों को योग्य है कि जो संसार में अविद्या का नाश तथा विद्या के दान से परम धनों को बढ़ाता है, उस परमेश्वर की आज्ञा का पालन और उपासना करके शरीर तथा आत्मा का बल नित्य बढ़ायें और इसकी सहायता के बिना कोई भी मनुष्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूपी फल प्राप्त होने को समर्थ नहीं हो सकता।

बड़ा आश्चर्य होता है: जैसे श्येन पक्षी पहले सेवन किये हुए सुख देनेवाले निवास-स्थान को स्थानान्तर से चलकर प्राप्त होता है, वैसे ही परमेश्वर को नमस्कार करते हुए मनुष्य उसी के बनाए इस संसार में सूर्य आदि लोकों के दृष्टान्तों से ईश्वर का निश्चय करके उसी की प्राप्ति करे, क्योंकि जितने इस संसार में रचे हुए पदार्थ हैं, वे सब रचनेवाले का निश्चय कराते हैं और रचनेवाले के

बिना किसी जड़ पदार्थ की रचना कभी नहीं हो सकती। जैसे इस व्यवहार में रचनेवाले के बिना कुछ भी पदार्थ नहीं बन सकता, वैसे ही ईश्वर की सृष्टि में भी जानना चाहिए। बड़ा आश्चर्य है कि ऐसे निश्चय हो जाने पर जो ईश्वर का अनादर करके नास्तिक हो जाते हैं, उनको यह अज्ञान क्योंकर प्राप्त होता है!

न हो भय किसी से हमें ऐ प्रभो: जैसे ईश्वर शत्रुओं से रहित तथा सूर्यलोक भी मेघ से निवृत्त हो जाता है, वैसे ही मनुष्यों को चोर-डाकू व शत्रुओं को मार और धनवाले धर्मात्माओं की रक्षा करके शत्रुओं से रहित अवश्य होना चाहिए।

चरित्र-बल तथा शूरता से ही सुज्ञान: जैसे परमेश्वर ने सूर्य के साथ प्रकाश, आकर्षण आदि कर्मों का निबन्धन किया है, वैसे ही विद्या, धर्म, न्याय, शूरवीरों की सेना आदि सामग्री प्राप्त हुए पुरुष के साथ इस पृथ्वी के राज्य को नियुक्त किया है।

सब लोक-लोकान्तर घूमते हैं: जैसे सब पृथ्वी आदि लोक मनुष्य आदि प्राणियों व सूर्यलोक अपने आकर्षण से पृथ्वी आदि लोकों व ईश्वर अपनी सत्ता से सूर्यादि सब लोकों का धारण करता है, ऐसे क्रम से सब लोकों का धारण होता है। इस बिना अन्तरिक्ष में किसी अत्यन्त भारयुक्त लोक की अपनी परिधि में स्थिति होने का सम्भव नहीं होता और लोकों के घूमने बिना क्षण, मुहूर्त्त, प्रहर, दिन, रात, पक्ष, मास, ऋृतु और सम्वत्सर आदि कालों के अवयव नहीं उत्पन्न हो सकते हैं।

एक ईश्वरवादी बनो, तभी विजयी बनोगे: मनुष्यों को एक अद्वितीय परमेश्वर की उपासना ही से सन्तुष्ट रहना चाहिए, क्योंकि विद्वान् लोग परमेश्वर के स्थान में अन्य वस्तु को उपासना-भाव से स्वीकार कभी नहीं करते। इसी कारण उनका युद्ध इस संसार में कभी पराजय नहीं दीख पड़ता, क्योंकि वे धार्मिक ही होते हैं और इसी से ईश्वर की उपासना नहीं करने वाले उनके जीतने को समर्थ नहीं होते क्योंकि ईश्वर जिनकी रक्षा करनेवाला है, उनकी पराजय कैसे हो सकती है!

सज्जनों का सन्मान हो, दुष्टों का प्रताड़न हो: सबको पूजने योग्य परमात्मा के कृपा-कटाक्ष से प्रजा की रक्षा के लिए राज्य के अधिकारी सब मनुष्यों

को योग्य है कि सत्य व्यवहार की प्रसिद्धि से धर्मात्माओं को आनन्द और दुष्टों को ताड़ना दें।

पूजनीय ईश्वर का वैदिक स्वरूपः मनुष्यों को उचित है कि जिस ईश्वर ने वेदों का उपदेश किया है, जो सब जगत् में व्याप्त होकर स्थित है, जिसमें सब पृथ्वी आदि लोक रहते और मुक्ति-समय में विद्वान् लोग निवास करते हैं, उसी परमेश्वर की उपासना करनी चाहिए, इससे भिन्न किसी की नहीं।

:7:

केवल सर्वज्ञ सर्वव्यापक प्रभु का अवलम्बनः विद्वानों को योग्य है कि इस जगत् के रक्षक, मोक्ष देनेवाले, विद्या, काम आनन्द के देनेहारे व उपासना करने योग्य परमेश्वर को छोड़ अन्य किसी का भी ईश्वरभाव से आश्रय न करे।

सबके कर्मों का साक्षी सर्वज्ञ प्रभुः जिससे ईश्वर सर्वत्र व्यापक, सबके आत्मा को जाननेवाला, सब कर्मों का साक्षी है, इसलिए यही सब सज्जन लोगों को नित्य उपासना करने योग्य है।

कर्मों का यथायोग्य फल देः जिसने सूर्य आदि लोक बनाए और जो सब जीवों के पाप-पुण्य को देखकर उनके सुख-दुःखरूप फलों को देता है, वही सबका सत्य-सत्य न्यायकारी राजा है, ऐसा सब मनुष्य जाने।

ईशोपासना व विद्वानों का सत्संगः निश्चय करके परमेश्वर या विद्वान् मनुष्य के संग के बिना कोई भी मनुष्य इष्ट सिद्धि को पूर्ण करनेवाला होने के योग्य नहीं है, इससे इसी की उपासना व विद्वान् का सत्संग करके इष्ट सिद्धि को सम्पादन करना चाहिये।

डी० ए० वी० पब्लिकेशन्ज फाउण्डेशन

चित्र गुप्त रोड, नई दिल्ली